''हार्दिक उत्साह, धैर्य, निश्चय, भक्तों के संग में भक्ति के अनुकूल क्रियाओं का सम्पादन और केवल सात्त्विकी क्रियाएँ करने से भक्तियोग सिद्ध होता है।''

दृढ़ निश्चय के सम्बन्ध में उस गौरैया का अनुसरण करना चाहिये, जिसके अण्डे सागर की तरंगों में नष्ट हो गये थे। एक गौरैया ने सागर तट पर अण्डे दिये, परन्तु महासमुद्र अपनी तरंगों पर उन्हें बहा ले गया। इस पर गौरैया अत्यन्त विक्षुब्ध हो गयी और समुद्र से अण्डे लौटाने को कहा। जैसा स्वाभाविक था, सागर ने उसके निवेदन पर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पर गौरैया ने समुद्र को सुखा डालने का निश्चय कर लिया। अपनी नन्हीं चोंच से वह उसका जल उलीचने लगी। सभी उसके असम्भव से निश्चय का उपहास कर रहे थे। इतने में उसकी क्रियाओं का समाचार सर्वत्र प्रसारित हो गया। भगवान् विष्णु के दिव्य वाहन पक्षीराज गरुडजी ने भी उसका श्रवण किया। अपनी नन्हीं बहन पर द्रवित होकर वे उसे देखने पधारे। गौरैया के दृढ़ निश्चय से हार्दिक प्रसन्न होकर गरुड़जी ने उसे सहायता का वचन दिया। उन्होंने तत्काल समुद्र को चेतावनी दी कि वह चिड़िया के अण्डे लौटा दे, नहीं तो वे स्वयं उसको सुखाने लगेंगे। इससे भयभीत होकर सागर ने अण्डे लौटा दिये। इस प्रकार गरुड़जी के अनुग्रह से गौरैया सुखी हो गई।

ऐसे ही योगाभ्यास, विशेष रूप से कृष्णभावनाभावित भक्तियोग पहले-पहल बड़ा कठिन लग सकता है। परन्तु जो भक्तिसिद्धान्तों का दृढ़ता से सेवन करता है उस पर श्रीगोविन्द अशेष-विशेष कृपा करते हैं। प्रसिद्ध है कि अपनी सहायता करने वालों की श्रीभगवान् भी सब प्रकार से सहायता करते हैं।

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत्।।२५।।

शनैः=धीरे-धीरे; **शनैः**=क्रम-क्रम से; **उपरमेत्**=विषयों से निवृत्त कर; **बुद्ध्या**=बुद्धि के द्वारा; **धृतिगृहीतया**=विश्वासपूर्वक; **आत्मसंस्थम्**=समाधि में; **मनः**=चित्त को; **कृत्वा**=करके; **न**=नहीं; **किंचित्**=अन्य कुछ; **अपि**=भी; **चिन्तयेत्**=चिन्तन करे।

अनुवाद

धीरे-धीरे पूर्ण विश्वासपूर्वक बुद्धि द्वारा समाधि में स्थित हो जाय और मन से आत्मस्वरूप के अतिरिक्त और कुछ भी चिन्तन न करे।।२५।।

तात्पर्य

पर्याप्त विश्वास एवं बुद्धि के माध्यम से धीरे-धीरे इन्द्रियक्रियाओं को रोक देना 'प्रत्याहार' कहलाता है। विश्वास, ध्यान एवं इन्द्रियों के निग्रह से संयमित हुए चित्त को समाधि में स्थिर करे। ऐसा करने पर देह में आत्मबुद्धि रहने का भय नहीं रहता। भाव यह है कि जब तक प्राकृत देह विद्यमान है, तब तक चाहे लौकिक पदार्थों से सम्पर्क बना रहे, परन्तु इन्द्रियतृप्ति का चिन्तन करना ठीक नहीं। भगवान् श्रीकृष्ण